महान आज्ञा की नींव : पाठ्यक्रम

टिप्पणियाँ -

कक्षा #१:

I. पाठ्यक्रम की प्रस्तावना।

II. सेवकाई की धार्मिक नींव:

क. नींव।

ख. जीवन का उद्देश्य।

कक्षा #२:

II. सेवकाई की धार्मिक नींव:

ख. जीवन का उद्देश्य (जारी।)।

ग. अपने उद्देश्य को व्यावहारिक बनाना।

कक्षा #३:

II. सेवकाई की धार्मिक नींव:

घ. जीवन का "दोहरा" उद्देश्य।

III. सेवकाई की ऐतिहासिक नींव:

क. परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना?

कक्षा #४:

III. सेवकाई की ऐतिहासिक नींव:

क. परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना (जारी।)?

कक्षा #५:

III. सेवकाई की ऐतिहासिक नींव:

ख. परमेश्वर ने बेबीलोन में निकलने की अनुमति क्यों दी।

ग. परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्यों भेजा।

घ. परमेश्वर ने यहूदियों को क्यों अस्वीकार दिया।

ङ. परमेश्वर ने कलीसिया को क्यों चुना।

च. परमेश्वर ने आपको क्यों चुना।

IV. पाठ्यक्रम का निष्कर्ष।

परीक्षा।

टिप्पणियाँ -

महान आज्ञा की नींव: परीक्षा

संभावित २० अंकीय प्रश्न

१) जीवन के दोहरे उद्देश्य को प्रगट करने वाले "आवश्यक बाइबिल सूत्र" को दर्शाने के लिए बाइबल के चार भागों का चुनाव करें (पृष्ठ ६५-६८)।

२) पौलुस द्वारा हमें दिए गए तीन उदाहरणों की सूची बनाएँ और उनकी व्याख्या करें जिनका सेवकों को अनुसरण करना चाहिए (पृष्ठ ७५)।

३) व्याख्या करें कि किस प्रकार अब्राहम की वाचा एक सेवकाई की वाचा है। उत्पत्ति १२:१-३; उत्पत्ति २८:१४,१५; और मत्ती २८:१९,२० का प्रयोग करें (पृष्ठ ७९)।

संभावित १० अंकीय प्रश्न

१) "आवश्यक परिभाषा" की व्याख्या करें।

२) किसी अन्य भाषा और संस्कृति को सीखने के लिए आवश्यक तीन सबसे महत्वपूर्ण योग्यताओं की सूची बनाएँ (पृष्ठ ७४)।

३) यह दर्शाने के लिए कि कैसे यीशु का जीवन और शिक्षाएँ जीवन के दोहरे उद्देश्य को प्रकट करती हैं, पवित्रशास्त्र के एक वचन का प्रयोग करें (पृष्ठ ७६)।

४) व्यवस्थाविवरण ७:६-८ का प्रयोग दो ऐसे कारणों को दर्शाने के लिए करें जिनसे पता चले कि परमेश्वर ने इस्राएल को चुना (पृष्ठ ७८)।

५) भजन संहिता ७:१-७ का प्रयोग करते हुए, यह समझाइए कि परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना (पृष्ठ ८१)।

६) यूहन्ना ३:१६ के अलावा दो अन्य शास्त्रों का उपयोग करें और यह बताएँ कि परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्यों भेजा (पृष्ठ ८४)।

महान आज्ञा

टिप्पणियाँ -

I. पाठ्क्रम की प्रस्तावना।

क. उदासीनता की त्रासदी।

लेखक का उदाहरण:

एक बार एक सेवक ने इन वचनों के साथ प्रचार/उपदेश को आरम्भ किया:

आज मैं तीन बिन्दुओं को बताना चाहता हूँ।

१) पहला, इस संसार में लाखों लोग ऐसे हैं जो नरक में जाने वाले हैं और उन्होंने अभी तक सुसमाचार को नहीं सुना है।

२) दूसरा, आप में से बहुत से लोगों को जो यहाँ बैठे हैं, इस बात से कोई फ़र्क नहीं पड़ता।

३) तीसरा, आप सभी इस बात से अधिक चिंतित हैं कि मैंने "फ़र्क" शब्द कहा है, आपको उन लाखों लोगों की चिंता नहीं है जो नरक में जा रहे हैं।

यह कहानी हमारे इस समय की शक्तिहीन धार्मिक कलीसिया के विषय में बहुत कुछ बताती है। यह बहुत "उचित" हो सकता है, लेकिन यह अकसर मरा हुआ होता है!

अपना उदाहरण लिखें:

ख. यीशु की योजना।

लेखक की टिप्पणी:

संसार के सुसमाचार प्रचार के लिए यीशु के पास एक योजना है। इसे ऐतिहासिक रूप से 'महान आज्ञा' कहा गया है। निम्नलिखित काल्पनिक कहानी इस तथ्य को दर्शाती है।

टिप्पणियाँ -

ध्यान दें: 'महान आज्ञा' अपने चेलों के लिए मसीह के छुटकारे की आज्ञा के लिए एक लोकप्रिय ऐतिहासिक नाम है। उन्होंने उन्हें सुसमाचार संदेश को बाँटने के माध्यम से ईमानदारी से स्वयं को पुन: पेश करने के लिए चुना। हालाँकि, 'महान आज्ञा' शब्द, बाइबल का शब्द नहीं है, इस पाठ में इस तरह के अनुच्छेदों का मत्ती २८:१८-२०; मरकुस १६:१५ में उल्लेख किया जायेगा।

लेखक का उदाहरण:

जब पृथ्वी पर यीशु की सेवकाई समाप्त हो गई तब वह स्वर्ग पर चढ़ गये। इस बात की कल्पना कीजिए कि स्वर्गदूतों ने उनसे यह पूछा होगा कि उन्होंने अपने उद्देश्य को पूरा किया या नहीं। यीशु ने उन्हें विजयी रूप से "हाँ" में उत्तर दिया। तब स्वर्गदूतों ने उनसे पूछा कि क्या सम्पूर्ण संसार ने उनकी बात सुनी या नहीं। यीशु ने उस प्रश्न का उत्तर "नहीं" में दिया। इसलिए स्वर्गदूतों ने उत्सुकता से उनसे पूछा कि अब उनकी योजना क्या है। यीशु ने बड़े विश्वास के साथ उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि पूरी पृथ्वी पर वचन को फैलाने के लिए उन्होंने १२ मनुष्यों और कुछ अन्य चेलों को नियुक्त किया है। स्वर्गदूत थोड़े चिंतित हो गये। उन्होंने यीशु से कहा कि वह उन्हें बताए कि उनकी दूसरी योजना क्या है। यीशु ने कहा कि कोई दूसरी योजना नहीं है।

तथ्य यह है कि परमेश्वर की योजना आपके और मेरे द्वारा सुसमाचार के साथ सम्पूर्ण संसार तक पहुँचने की है, यह महान आज्ञा का सार है। इसके अलावा कोई अन्य योजना नहीं है।

अपना उदाहरण लिखें:

ग. इस पाठ्क्रम के विषय।

१. इस पाठ्यक्रम में हम महान आज्ञा की एक बुनियादी समझ को स्थापित करेंगे। यह पाठ्यक्रम इस श्रृंखला के अन्य सेवकाई के पाठ्यक्रमों के लिए एक आधारभूत पाठ्यक्रम के रूप में कार्य कर सकता है।

२. इस पाठ्यक्रम को दो प्रमुख खंडों में विभाजित किया गया है:

क. सेवकाई की धार्मिक नींव।

ख. सेवकाई की ऐतिहासिक (बाइबल की) नींव।

महान आज्ञा

टिप्पणियाँ -

II. सेवकाई की धार्मिक नींव।

क. नींव।

१. इस खंड में हम महान आज्ञा की बुनियादी नींव को प्रदान करेंगे।

२. ऐसा करने के लिए, हम सबसे बुनियादी प्रश्न करेंगे जिसे कोई व्यक्ति पूछ सकता है: "मैं क्यों जीवित हूँ?"

क. हम जीवन के उद्देश्य पर चर्चा करेंगे। हम देखेंगे कि महान आज्ञा की जड़ें जीवन के बाइबिल उद्देश्य में है।

ख. हम देखेंगे कि बाइबल लगातार जीवन के दोहरे उद्देश्य की ओर संकेत करती है। जब हम महान आज्ञा को बेहतर ढंग से समझने की कोशिश करते हैं, तब हम इन दो उद्देश्यों का विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन करेंगे।

ख. जीवन का उद्देश्य।

१. आवश्यक प्रश्न। मैं जीवित क्यों हूँ? मेरे जीवन का क्या उद्देश्य है? मेरे जीवन क्या अर्थ है?

२. आवश्यक सत्य।

क. अनन्तकाल की तुलना में यह जीवन काल केवल क्षण भर का है।

१) गणना करने के लिए, हमें यह कहने दीजिये कि अनन्तकाल ८,०००,०००,०००, वर्ष लंबा है (हालाँकि ८,०००,०००,०००, वर्षों के बाद अनन्तकाल केवल आरम्भ हुआ है)। अब हम यह कहते हैं कि आप धन्य हैं क्योंकि आपका जीवन लंबा है और आप १०० वर्ष तक जीवित रहेंगे।

क) इन संख्याओं का उपयोग करके, आपका जीवन अनन्तकाल की तुलना में केवल एक सेकंड (एक सेकंड का १/३०) का एक अंश होगा।

ख) आपके "मैं" कहने से पहले ही आपका जीवन समाप्त हो जाएगा।

ग) ये गणनाएँ एक महत्वपूर्ण सच्चाई को दर्शाती हैं। हमारा जीवन आज है और कल नहीं होगा।

ख. एक सेकंड केवल उद्देश्य को ढूँढ सकता है क्योंकि यह बाकी समय को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। यह स्वयं किसी उद्देश्य को खोजने के लिए सक्षम नहीं है।

टिप्पणियाँ -

१) यानी इस संसार में हमारे जीवन को केवल उद्देश्य ही मिल सकता है क्योंकि वे हमारे आने वाले जीवन को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। हमारे जीवन का उद्देश्य अनन्तकाल के अनुसार परिभाषित होना चाहिए।

२) यदि एक सेकंड का उपयोग हमें अनन्तकाल की ओर ले जाने के लिए किया जा सकता है, तो, (और केवल तभी) इसका कोई उद्देश्य है।

३. आवश्यक रहस्य।

क. अनन्त जीवन में उद्देश्य पाया जाता है।

ख. यह उन बहुत से लोगों के लिए एक रहस्य की बात है जो अस्थायी चीज़ों में उद्देश्य खोजने की कोशिश करते हैं।

१) मनुष्य की निराशा अनन्त उद्देश्य की इस गलतफहमी से आती है। वह उद्देश्य को खोजने के लिए विभिन्न तरीकों का प्रयोग करता है। वे सभी अस्थायी हैं (पैसा, यौन-सम्बन्ध, नशीले पदार्थ, शराब, विभव, प्रतिष्ठा, शिक्षा, आदि)।

२) इनमें से कुछ चीजें "अच्छी" हैं और कुछ "बुरी"। यह सभी चीज़ें तृप्ति की स्थायी भावना की पूर्ती नहीं कर सकतीं क्योंकि वे सभी यह दिखावा करने की कोशिश करती हैं कि "केवल एक सेकंड" वास्तव में उससे अधिक लंबा है, जितना वह प्रतीत होता है।

४. आवश्यक परिभाषा।

क. यदि आवश्यक रहस्य यह है कि अनन्त जीवन में उद्देश्य पाया जाता है, तो आवश्यक परिभाषा अनन्त जीवन की परिभाषा है।

ख. यीशु द्वारा अनन्त जीवन को हमारे लिए बहुत ही सरल शब्दों में परिभाषित किया गया है।

१) यूहन्ना १७:३ पढ़ें।

२) अनन्त जीवन का अर्थ परमेश्वर को जानना है।

५. आवश्यक समझ।

क. हम जीवित क्यों हैं? – **परमेश्वर को जानने के लिए ताकि सब लोग भी उन्हें जान सकें।**

ख. हम अनन्त जीवन जीने और दूसरों की भी इसे जीने में सहायता करने के लिए जीवित हैं।

टिप्पणियाँ -

६. आवश्यक बाइबल सूत्र।

क. बाइबिल जीवन के इस **"दोहरे"** उद्देश्य को प्रगट करती है।

ख. यह अलग-अलग तरीकों से और बाइबल में कई अलग-अलग जगहों पर प्रगट होता है। हम बाइबल के प्रत्येक प्रमुख भाग से एक उदाहरण देंगे।

चर्चा विषय

निम्नलिखित चित्र दिखाता है कि कैसे बाइबल का प्रत्येक भाग जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को प्रगट करता है, जो कि परमेश्वर को जानना है, ताकि दूसरे लोग भी उसे जान सके। हमारे अध्ययन के इस भाग के लिए चित्र का उपयोग मार्गदर्शक के रूप में करें।

जीवन का दोहरा उद्देश्य

बाइबल का भाग	परमेश्वर को जानें	परमेश्वर को सब जान सकें
मूसा द्वारा लिखी गईं पहली पाँच पुस्तकें	उत्पत्ति १२:१, २क	उत्पत्ति १२:२ख-३
लेख	सभोपदेशक १२:१३	सभोपदेशक १२:१३
भविष्यद्वक्ता	यशायाह ४३:१०	यशायाह ४३:९-१२
सुसमाचार	मरकुस १२:३०	मरकुस १२:३१
पौलुस द्वारा लिखी गईं पत्रियाँ	फिलिप्पियों ३:८-१०	फिलिप्पियों १:२१-२५
यीशु का उद्देश्य	यूहन्ना १७:११, २१-२५	यूहन्ना १७:६,२६; लूका ४:४३
सामान्य सन्दर्भ	रोमियों ८:२८, २९	मत्ती २८:१८-२०

ग. मूसा द्वारा लिखी गईं पहली पाँच पुस्तकें।

१) उत्पत्ति १२:१-३ में, हम अब्राहम की वाचा के दो भागों (या उद्देश्य) को देखते हैं।

क) वाचा के पहले भाग में हम तीन विशेषाधिकारों को देख सकते हैं जो इस्राएल के आशीषित होने से सम्बंधित हैं। क्योंकि अब्राहम की सबसे बड़ी आशीष परमेश्वर को जानना था, तो इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि परमेश्वर को जानना ही आशीषों का सार था।

टिप्पणियाँ -

ख) वाचा के दूसरे भाग में हम तीन ज़िम्मेदारियों को देख सकते हैं जो इस्राएल को दूसरों के लिए आशीष होने से सम्बंधित हैं। जैसा कि हम बाद में देखेंगे, इस ज़िम्मेदारी का सार परमेश्वर को ज्ञात करवाना था।

२) इस तरह हम अब्राहम की वाचा के भीतर जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को देख सकते हैं।

घ. लेख

१) सभोपदेशक १२:१३ में, हम एक लेखक द्वारा दिए गये निष्कर्ष को देखते हैं जिन्होनें जीवन के उद्देश्य के प्रश्न के साथ १२ अध्यायों में संघर्ष किया। उनका निष्कर्ष यह है कि इसके दो उद्देश्य हैं।

क) पहला, उद्देश्य जिनके विषय में वह कहते हैं वह परमेश्वर का भय मानना है। पुराने नियम में परमेश्वर के भय की अवधारणा को अकसर परमेश्वर को जानने के साथ जोड़ा जाता है (२ इतिहास ६:३३; भजन संहिता ३४:९,१०; नीतिवचन २:५ देखें)।

ख) दूसरा उद्देश्य जो वह कहते हैं वह परमेश्वर की आज्ञा मानना है। परमेश्वर को ज्ञात करवाना सबसे महत्वपूर्ण आज्ञा ("महान" आज्ञा) है।

२) इस तरह हम सभोपदेशक के लेखक द्वारा समझाए गये जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को देख सकते हैं।

ङ. भविष्यद्वक्ता।

१) भविष्यद्वक्ता यशायाह ने समझाया कि इस्राएल (परमेश्वर के लोग) के दो उद्देश्य हैं।

क) ४३:१० में उन्होंने कहा कि इस्राएल को इसलिए चुना गया कि वे परमेश्वर को जान सकें।

ख) इसी सन्दर्भ में उन्होंने कहा कि उनका दूसरा उद्देश्य परमेश्वर के साक्षी बनना है। अन्य राष्ट्र सुनें और कहें कि यह सच है (पद १२ देखें)।

२) इस तरह हम जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को देख सकते हैं जैसा कि भविष्यवक्ता यशायाह ने कहा है।

टिप्पणियाँ -

च. सुसमाचार

१) मरकुस १२:२८ में एक शास्त्री ने यीशु से सबसे मुख्य आज्ञा के विषय में एक प्रश्न पूछा। उनके प्रश्न का सार निश्चित रूप से जीवन के उद्देश्य पर लागू होने के रूप में देखा जा सकता है। यीशु ने इस प्रश्न के दो उत्तर दिए।

क) सबसे पहले, हमें अपने सारे मन, सारे प्राण और सारी बुद्धि से परमेश्वर से प्रेम करना है। परमेश्वर के साथ समय व्यतीत करके हम अपने प्रेम को दिखा सकते हैं। परमेश्वर से प्रेम करने का अर्थ उन्हें खोजना और जानना है।

ख) दूसरा, हमें अपने पड़ोसियों से अपने समान प्रेम करना है। किसी के साथ सुसमाचार बाँटने से बड़ा प्रेम का कार्य और क्या हो सकता है? अपने पड़ोसी से प्रेम करना परमेश्वर (जो प्रेम है) को उसके सामने प्रगट करना है।

२) इस तरह हम जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को देख सकते हैं, जैसा कि इन दो महान आज्ञाओं में प्रगट होता है।

छ. पौलुस की पत्रियाँ।

१) फिलिप्पियों को लिखे पत्र में पौलुस ने अपने जीने के उद्देश्य के बारे में बहुत व्यक्तिगत रूप से बात की है। वह अपने जीवन के दो उद्देश्यों को प्रगट करते हैं।

क) फिलिप्पियों ३:८-१० में पौलुस ने जीवन के उद्देश्य के विषय में लिखा। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मैं उन्हें जानना चाहता हूँ।

ख) फिलिप्पियों १:२१-२५ में पौलुस ने अंत में यह निर्णय लिया कि वह जीवित रहेंगे, भले ही मरने से भी लाभ ही होगा। क्यों? क्योंकि यह फिलिप्पियों के बीच परमेश्वर को प्रगट करना जारी रखने के उद्देश्य के लिए आवश्यक था।

२) इस तरह हम पौलुस के जीवन में भी **"दोहरे"** उद्देश्य को देख सकते हैं।

ज. यीशु के उद्देश्य।

१) यूहन्ना १७ में, यीशु ने उद्देश्य के विचार पर ध्यान केंद्रित किया जैसा कि उनके स्वयं के जीवन में भी प्रतिबिंबित होता है। अपनी प्रार्थना में, यीशु ने अपने जीवन के दो उद्देश्यों की ओर संकेत किया।

क) सबसे पहले, उन्होंने इस विचार को दोहराया कि वह पिता के साथ हैं। उनका उद्देश्य उनके साथ पूर्ण संबंध में रहना था। उन्होंने पद २५ में घोषणा की, "मैंने तुझे जाना है।"

टिप्पणियाँ -

ख) पद २६ में, उन्होंने तुरंत अपने दूसरे उद्देश्य को प्रगट किया और कहा, "मैं ने तेरा नाम उनको बताया और बताता रहूँगा" (पद ६ भी देखें)।

(१) यीशु के इस दूसरे उद्देश्य लूका ४:४३ में भी स्पष्ट रूप से देखा गया है।

(२) उन्होंने कहा कि उन्हें अन्य नगरों में भी परमेश्वर के राज्य का सुसमाचार सुनाना अनिवार्य है क्योंकि "उन्हें इसी उद्देश्य से भेजा गया था।"

२) इस प्रकार हम स्वयं यीशु के जीवन में भी जीवन के "दोहरे" उद्देश्य को देख सकते हैं।

झ. सामान्य सन्दर्भ।

१) जीवन में उद्देश्य के सम्बन्ध में, अब हम दो प्रसिद्ध पवित्रशास्त्र के वचनों का उल्लेख कर सकते हैं जो हमें सामान्य संदर्भ प्रदान करते हैं।

क) रोमियों ८:२८,२९ में, पौलुस ने सीधे तौर पर हमारे जीवनों के लिए परमेश्वर के उद्देश्य का उल्लेख किया है। इसे यीशु मसीह के स्वरूप में बनाना है। यह उनके साथ सम्बन्ध बनाने के द्वारा किया जाता है। ऐसा तब होता है जब हम परमेश्वरकी उपस्थिति में समय व्यतीत करते हैं। परमेश्वर को जानने के द्वारा, हम उसके पुत्र के स्वरूप में ढ़लते चले जाते हैं। यह हमारे जीवन के लिए उसका उद्देश्य है।

ख) मत्ती २८:१८-२० में, हम यीशु द्वारा चेलों को दी गयी अंतिम आज्ञाओं को पाते हैं। यह आज्ञाएँ हमारे जीवन के उद्देश्य को परिभाषित करती हैं। यह स्पष्ट है कि हमें परमेश्वर को ज्ञात करवाना है। यह हमारा उद्देश्य है।

२) इस प्रकार हम इन "सामान्य" संदर्भों में जीवन के दोहरे उद्देश्य को देख सकते हैं।

ञ. सारांश समीक्षा।

१) हम परमेश्वर की रचना हैं। वास्तविक उद्देश्य के लिए, रचना के उद्देश्यों को सृष्टिकर्ता के उद्देश्यों के अनुरूप होना चाहिए। अपने अस्तित्व के लिए सृष्टि उन उद्देश्यों के भीतर अर्थ ढूँढती है जो उसके सृष्टिकर्ता के पास उसके लिए हैं। परमेश्वर के क्या उद्देश्य हैं?

क) उनका पहला उद्देश्य मनुष्य को छुड़ाना है (१ तीमुथियुस १:१५ देखें)।

टिप्पणियाँ -

(१) अर्थात्, पतित मनुष्य को जी उठे हुए मसीह के स्वरूप में बदलना है (रोमियों ८:२८,२९ की समीक्षा करें)।

(२) इस प्रकार मनुष्य का उद्देश्य परमेश्वर को जानना है।

ख) उनका दूसरा उद्देश्य शैतान से राज्य को वापस जीतना है (१ यूहन्ना ३:८; इब्रानियों २:१४ देखें)।

(१) अर्थात्, राष्ट्रों तक सुसमाचार पहुँचाने के लिए छुड़ाए हुए मनुष्य को संसार का नमक और ज्योति बनने के लिए उपयोग करना है (मत्ती २८:१८-२० की समीक्षा करें)।

(२) इस प्रकार, मनुष्य का उद्देश्य परमेश्वर को ज्ञात करवाना है।

२) मेरे जीवन के लिए परमेश्वर का उद्देश्य यह है कि वह मुझमें कार्य करे ताकि मैं उसे जान सकूँ, और वह मेरे द्वारा कार्य करे ताकि मैं उन्हें ज्ञात करवा सकूँ।

७. आवश्यक नींव।

क. परमेश्वर का राज्य।

१) आपके जीवन की नींव क्या है? एक मसीही जीवन परमेश्वर के राज्य पर बना होना चाहिए। यही हमारी चिंता का एकमात्र कारण होना चाहिए (मत्ती ६:३३)।

२) परमेश्वर का राज्य वर्तमान और भविष्य है।

क) हमारा जीवन कालानुक्रमिक अंतराल में खड़ा है। अर्थात् राजा के पहले और दूसरे आगमन के बीच हम अपने जीवन को व्यतीत कर रहे हैं।

ख) इसलिए मेरे जीवन का उद्देश्य वर्तमान से भविष्य की ओर बढ़ना होना चाहिए। मैं यह कैसे कर सकता हूँ?

ग) भविष्य का राज्य तब आएगा जब यीशु वापस आएँगे। यीशु ने कहा कि जब सभी राष्ट्रों में सुसमाचार का प्रचार किया जाएगा तो वह वापस आ जाएँगे (मत्ती २४:१४ देखें)। यदि वास्तव में, मेरे जीवन का उद्देश्य भविष्य के राज्य की ओर बढ़ना है, तो मेरे जीवन का उद्देश्य राष्ट्रों को सुसमाचार सुनाने पर केंद्रित होना चाहिए।

टिप्पणियाँ -

ख. राजा।

१) यदि मेरा जीवन परमेश्वर के राज्य पर बना है, तो उस राज्य के राजा पर और कितना बना होना चाहिए? अंततः, हमें अपने जीवन को यीशु पर बनाना चाहिए (१ कुरिन्थियों ३:११ देखें)।

क) चूँकि यीशु का उद्देश्य सुसमाचार का प्रचार करना था (मरकुस १:१४,३८; लूका ४:४३), और चूँकि अब मैं जीवित नहीं हूँ, परन्तु मसीह मुझ में जीवित है (गलातियों २:२०), तो ममेरे जीवन का अर्थ सुसमाचार का प्रचार करना है (साक्षी होना, गवाही देना, बाइबल पढ़ाना, आदि)।

ख) मेरे जीवन में मसीह का जीवन दिखाई देना चाहिए। यही प्रेरितों के काम की पुस्तक का सार है (यह यीशु के चेलों के द्वारा उनकी सेवकाई के विस्तार को दर्शाता है)।

२) किस प्रकार मेरे द्वारा उनकी सेवकाई बढ़ेगी? यह उनके साथ सम्बन्ध बनाने के माध्यम से होगा। जितना अधिक मैं उन्हें जानूँगा, उतनी ही सफलतापूर्वक मैं उन्हें ज्ञात करवा पाऊँगा।

क) मुझे उन्हें परमेश्वर के रूप में जानना होगा। मसीह के अलावा किसी भी बात का कुछ भी अर्थ नहीं है। मसीह में ही प्रत्येक बातों का अर्थ है। वह प्रभु हैं। जब कोई चीज़ मसीह से सम्बंधित होती है, तभी उसका मूल्य और अर्थ होता है।

ख) मुझे उन्हें परमेश्वर के वचन के रूप में जानना चाहिए। मुझे बाइबल के अनुसार निर्णय लेने चाहिए। यह मेरे जीवन को निर्देशित करता है।

ग) मुझे उन्हें उद्धारकर्ता के रूप में जानना चाहिए।

(१) वही मेरी एकमात्र आशा है। क्रूस मेरे उद्धार का प्रतिनिधित्व करता है।

(२) मुझे अपने जीवन का निर्माण क्रूस की विजय पर करना चाहिए। मुझे भी इसकी व्यबस्था को स्वीकार करके इसका पालन करना चाहिए।

(३) इस प्रकार, मेरा जीवन मेरी मृत्यु पर बना है (मत्ती १६:२४,२५)।

घ) मुझे उन्हें अपने अधिकार के रूप में जानना चाहिए।

(१) मैं अपने लिए नहीं वरन् मसीह के लिए जीता हूँ। मैं अपने अधिकार के द्वारा नहीं वरन् उनके अधिकार के द्वारा सेवा करता हूँ।

(२) मैं एक राजदूत हूँ। मैं एक राजा के लिए दूत हूँ।

टिप्पणियाँ -

(३) मेरे सन्देश और मेरी सेवकाई को उनके अधिकार में वैधता मिलती है।

(४) वास्तव में, महान आज्ञा स्वयं इसी सिद्धांत पर आधारित है (२८:१८ देखें)।

ग. मेरे जीवन के अन्य मूलभूत सिद्धांत (जो मेरे जीवन को उद्देश्य देते हैं)।

१) मुझे परमेश्वर ने चुना है। मेरा जीवन चुने जाने की मेरी समझ पर आधारित है।

क) मुझे इस अर्थ में नहीं चुना गया है ताकि किसी और को बाहर रखा जाए। मुझे इसलिए चुना गया है ताकि दूसरों को भी शामिल किया जा सके।

ख) यह सच है क्योंकि परमेश्वर ने पात्रों के द्वारा कार्य करना चुना है। इस प्रकार, उन्हें दूसरों के जीवन को छूने के कार्य को करने के लिए किसी को चुनना अनिवार्य है।

२) केवल यीशु ही मार्ग है (यूहन्ना १४:६)।

क) मेरे जीवन को तब दिशा मिलती है जब मैं बाइबिल के इस तथ्य पर विचार करता हूँ कि मनुष्य को सुसमाचार के बिना बचाया नहीं जा सकता है।

ख) लोग सुसमाचार के बारे में कैसे जानेंगे? उन्हें कौन बताएगा? (रोमियों १०:१४,१५)।

३) अच्छाई सर्वश्रेष्ठ की शत्रु है।

क) जीवन में करने के लिए बहुत सी "अच्छी" चीज़ें हैं, लेकिन इनमें से "सर्वश्रेष्ठ" क्या है? यह परमेश्वर की आज्ञा पर निर्भर करता है।

ख) जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, "सर्वश्रेष्ठ" (महानतम) आज्ञाएँ परमेश्वर और दूसरों से प्रेम करना है।

(१) मेरा जीवन परमेश्वर को जानने और उनसे प्रेम करने की इच्छा पर बना होना चाहिए।

(२) यह उन्हें ज्ञात करवाने की इच्छा पर भी बना होना चाहिए।

टिप्पणियाँ -

घ. हमारा तार्किक निष्कर्ष।

१) मैं यह कह सकता था कि मेरा जीवन तर्क पर आधारित है।

क) रोमियों १२:१ का एक अनुवाद यह कहता है कि हमारी देह और जीवन को परमेश्वर के सामने प्रस्तुत करना हमारी "तार्किक" आराधना की सेवा है। यह सब बहुत तार्किक है।

ख) एक तार्किक प्रगति है जिसे मुझे पहचानना चाहिए:

(१) क्या मैं वास्तव में विश्वास करता हूँ कि यीशु ने तब झूठ नहीं बोला, जब उन्होंने कहा, "बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुँच सकता (यूहन्ना १४:६)।

(२) क्या मैं वास्तव में विश्वास करता हूँ कि सुसमाचार में "उद्धार करने की सामर्थ्य" है (रोमियों १:१६)।

(३) क्या मैं उन आंकड़ों पर विश्वास करता हूँ जो यह बताते हैं कि कितने लोगों ने अभी भी सुसमाचार नहीं सुना है (कुछ मिसियोलॉजिस्ट कहते हैं कि ऐसे ११००० लोगों का समूह हैं)।

(४) क्या मुझे विश्वास है कि यीशु तब तक नहीं लौटेंगे जब तक कि वे सुसमाचार सुन न लें (मत्ती २४:१४)।

(५) क्या मैं चाहता हूँ कि वह वापस आकर अपना राज्य स्थापित करें।

(६) तब मैं स्वयं जाऊँगा या दूसरों को भेजूँगा।

२) मैं जीवित क्यों हूँ?

क) मेरे जीवन का अर्थ परमेश्वर को जानना और उन्हें ज्ञात करवाना है।

ख) सेवकाई की यह समझ सबसे बुनियादी धार्मिक आधार है। प्रत्येक सेवक इसी समझ से प्रेरित होता है। यह उसे यीशु मसीह के संदेश को फैलाने के लिए विवश करता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यह उसे उनके साथ समय बिताने के लिए विवश करता है जिसका संदेश वह फैला रहा है।

टिप्पणियाँ -

ग. अपने उद्देश्य को व्यावहारिक बनाना।

लेखक की टिप्पणी:

यह खंड धर्मशास्त्र से ज़्यादा सम्बंधित है, लेकिन यह अनुप्रयोग के लिए व्यावहारिक बिंदु भी प्रदान करता है।

१. परमेश्वर को जानना (नीतिवचन ३:५,६ देखें)।

क. हमें अपने सभी तरीकों से परमेश्वर को जानना (स्वीकार करना) है। हमारा सबसे व्यावहारिक लक्ष्य निरंतर परमेश्वर की उपस्थिति का अभ्यास करना है।

१) पवित्रता को इन शब्दों के द्वारा समझा जा सकता है। यह एक सीखने की प्रक्रिया है कि कैसे परमेश्वर के साथ अधिक समय व्यतीत किया जाए। इसका उद्देश्य परमेश्वर के साथ कल की तुलना में आज अधिक समय व्यतीत करना है।

२) परमेश्वर को खोजना ही हमारे दिनभर का केंद्र होना चाहिए। हमें इसे अपने समय के अनुकूल बनाने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

ख. प्रत्येक सेवक को परमेश्वर को अपनी पहली प्राथमिकता बनाने का निर्णय लेना चाहिए। उनके "कार्य" परमेश्वर के साथ उनके सम्बन्ध को बाधित नहीं कर सकते।

लेखक की टिप्पणी:

यदि आप समय को पाश्चात्य दृष्टिकोण से देखते हैं तो निम्नलिखित सुझाव बहुत सहायक होंगे। यह आपकी संस्कृति के समय के परिप्रेक्ष्य के आधार पर लागू नहीं हो सकते।

टिप्पणियाँ -

लेखक के सुझाव:

दैनिक जीवन जीने के लिए दो सहायक कुंजियाँ:

१. दैनिक दृष्टिकोण से अपने जीवन की योजना बनाएँ। परमेश्वर को खोजने से सम्बंधित दैनिक अनुशासन विकसित करें (मत्ती ६:३४ देखें)।

ऐसा कहा गया है: हमारे पास आज ही सब कुछ है क्योंकि कल जा चुका है और आनेवाला कल कभी नहीं आ सकता है।

२. प्रत्येक दिन को २४ घंटे की अवधि के रूप में देखें (न कि केवल आठ घंटे के कार्य दिवस के रूप में)। अपने लक्ष्यों को प्राथमिकता दें और दिन के बारे में सोचकर स्वयं को अनुशासित करें, जिसमें समय के तीन खंड शामिल हों, जिनमें से प्रत्येक खंड में आठ घंटे हों।

पहले खंड में सोना और व्यायाम शामिल हैं।

दूसरे खंड में वह समय होता है जब आप अपने कार्य करते हैं।

तीसरे खंड में परिवार, अन्य मसीहियों और परमेश्वर के साथ व्यतीत किया गया समय शामिल है।

इस दृष्टिकोण के द्वारा आप परमेश्वर के साथ नियोजित समय के प्रत्येक दिन कम से कम दो या तीन घंटे व्यतीत कर सकते हैं। इस समय के दौरान आप प्रार्थना, स्तुति और आराधना करने के लिए स्वयं को अनुशासित और बाइबल का अध्ययन कर सकते हैं।

२. परमेश्वर को ज्ञात करवाना।

क. यहाँ हम सेवा के कार्य करने के लिए कुछ संक्षिप्त व्यावहारिक अंतर्दृष्टि देना चाहते हैं।

ख. भाषा और संस्कृति को सीखना। किसी अन्य भाषा और संस्कृति को सीखने के लिए सबसे महत्वपूर्ण योग्यताएँ।

१) नम्र होने की योग्यता (गलातियों २:२०, १ कुरिन्थियों ४:१०-१३ और रोमियों १:११,१२ देखें)।

२) लचीले होने की योग्यता (१ कुरिन्थियों ९:१९-२३ और प्रेरितों के काम १६:६-१० देखें)।

३) साहस रखने की योग्यता (प्रेरितों के काम ९:२८, २९ और २०:२२-२४ देखें)

टिप्पणियाँ -

ग. समूह में काम करना ("प्रेरितों का समूह")

१) सेवकों को पौलुस के उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए और दूसरों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए। अगुवाई की अधिकाई जहाँ विविधता में एकता का अभ्यास किया जाता है, अकसर कलीसिया की उन्नति के कार्य में एक प्रभावी स्थिति होती है (इफिसियों ४:११-१३, रोमियों १२:४-६ और १ कुरिन्थियों १२:१२-२७ देखें)।

२) जब सेवक स्वयं को तैयार करते और दूसरों को सेवकाई की अगुवाई देकर अपनी सेवकाई को बढ़ाते हैं तब उन्हें पौलुस के उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए ताकि कलीसिया के अस्तित्व के लिए उनकी अब और आवश्यकता न हो (प्रेरितों के काम १४:२३ देखें)।

३) सेवकों को पौलुस के उदाहरण का अनुसरण करना चाहिए और दूसरों को सेवकाई की अगुवाई देने के खतरे को उठाने के लिए तैयार रहना चाहिए (१ कुरिन्थियों १:२१-२:३, फिलिप्पियों १:६, और गलातियों ५:१० देखें)।

घ. सुसमाचारों द्वारा देखा गया जीवन का "दोहरा" उद्देश्य।

लेखक की टिप्पणी:

निम्नलिखित खंड में पवित्रशास्त्र के ऐसे समूह दिए गए हैं जिनका उपयोग जीवन के उद्देश्य का और अधिक अध्ययन करने के लिए किया जा सकता है। प्रत्येक समूह में प्रत्येक पवित्रशास्त्र को पढ़ें और विचार करें कि यह अध्ययन के संगत बिंदु की व्याख्या करने के लिए पिछले पवित्रशास्त्र पर कैसे आधारित है।

प्रत्येक अनुच्छेद में आपको परमेश्वर को जानने के बारे में कुछ खोजने में सक्षम हो जाना चाहिए (परमेश्वर के साथ सम्बन्ध, उद्धार का संदर्भ, परमेश्वर से प्रेम करना, आदि) और/या उसे ज्ञात करवाना (सुसमाचार, गवाह, "राष्ट्रों" का सन्दर्भ, आदि)।

१. बाइबल सिखाती है कि जीवन का एक "दोहरा" उद्देश्य है।

क. मत्ती २२:३७-४०

ख. लूका १०:२५-३७

ग. लूका २:२९-३२ (शान्ति और उद्धार परमेश्वर को जानने के समान है; सभी लोगों और अन्यजातियों के लिए प्रकाशन का प्रकाश परमेश्वर को ज्ञात करवाने के समान है)।

टिप्पणियाँ -

२. यीशु का जीवन और शिक्षाएं इस "दोहरे" उद्देश्य को प्रगट करती हैं।

क. मत्ती ११:१ (चेले का जीवन यीशु के साथ सम्बन्धों और परमेश्वर को दूसरों को ज्ञात करवाने से भरा हुआ था)।

ख. मरकुस ११:१७।

ग. मत्ती १०:२५,२७।

घ. मरकुस १०:२९ (मेरे लिए परमेश्वर को जानने के समान है; सुसमाचार के लिए उसे ज्ञात करवाने के समान है)।

ङ. लूका १२:१-१२ (परमेश्वर का भय परमेश्वर को जानने के समान है; पद ३,८,११,१२ उसे ज्ञात करवाने के बराबर है)।

३. "दोहरे" उद्देश्य के भीतर एक प्रगति/ चढ़ाव शामिल है। एक उद्देश्य दूसरे उद्देश्य का अनुसरण करता है।

क. मत्ती ४:१९।

ख. मरकुस ३:१४।

ग. लूका १२:१-१२ (यदि आप परमेश्वर का भय मानते या उसे जानते हैं, तो आप उन्हें ज्ञात करवाएँगे)।

घ. लूका ५:१६ (परमेश्वर को ज्ञात करवाने के साथ-साथ हमें उनके साथ समय व्यतीत करना चाहिए)।

ङ. लूका ९:५९,६०।

च. मत्ती २५:४० (दूसरों की सहायता करना या यीशु को ज्ञात करवाना, उनकी सहायता करने या उन्हें जानने के साथ जुड़ा हुआ है)।

छ. लूका ४:१८ (मुझ पर प्रभु की आत्मा के होने से सुसमाचार का प्रचार होता है)।

ज. लूका ८:१५ (प्रकाश का होना और उसे चमकने न देना व्यर्थ है; परमेश्वर को जानना और उसे ज्ञात न करवाना व्यर्थ है।

झ. लूका ८:२१ (परमेश्वर के साथ सम्बन्ध को उनकी आज्ञाकारिता के सन्दर्भ में परिभाषित किया जा सकता है; परमेश्वर को जानने को, उन्हें ज्ञात करवाने के संदर्भ में परिभाषित किया जा सकता है)।

ञ. मत्ती २८:१७-२० (परमेश्वर की आराधना करने का अर्थ उनके द्वारा भेजा जाना है; परमेश्वर को जानना, उन्हें ज्ञात करवाना है)।

टिप्पणियाँ -

४. परमेश्वर को जानना।

क. परमेश्वर को जानने का महत्व (लूका १०:४१,४२; मरकुस ४:११; मत्ती २२:८; मत्ती २५:१२)।

ख. परमेश्वर को जानने की प्रक्रिया (मत्ती १३:१२; मरकुस १५:३८; लूका ६:४६-४९; मत्ती ७:२१; मरकुस १०:१४,१५; मरकुस ४:२४,२५; लूका १८:२९,३०; मरकुस १४:७१; और मरकुस ८:३३ देखें)।

ग. परमेश्वर को जानने में घनिष्ठ सम्बन्ध (लूका १०:४१,४२; मत्ती २३:३७; मत्ती ११:२८; मत्ती १२:५० देखें)।

घ. परमेश्वर को जानने का मूल्य (मत्ती १६:२४; मत्ती २६:७२; मत्ती २०:३१,३२; मरकुस १०:४८ देखें)।

५. परमेश्वर को ज्ञात करवाना।

क. परमेश्वर को ज्ञात करवाने की प्रक्रिया (मरकुस १:३८; मत्ती ५:१३-१६; लूका ८:१६; लूका ४:१८; मत्ती २४:१४ देखें)।

ख. परमेश्वर को ज्ञात करवाने का महत्व (लूका १०:१,२; लूका ८:१६; मत्ती ५:१३-१६; मत्ती २४:१४ देखें)।

ग. यीशु को ज्ञात करवाने की प्रक्रिया (लूका १०:१६; लूका १०:२५-३७; लूका १४:२३ देखें)।

लेखक की टिप्पणी:

हमने यह निष्कर्ष निकाला है कि इस प्रश्न के उत्तर में सेवकाई के लिए धार्मिक आधार पाया जाता है, "मैं जीवित क्यों हूँ? या मेरे जीवन का क्या उद्देश्य है?"

इस उत्तर में हमने देखा है कि कैसे सेवकाई स्वाभाविक और अनिवार्य रूप से परमेश्वर के साथ सम्बन्ध से जुड़ी हुई है।

टिप्पणियाँ -

III. सेवकाई की ऐतिहासिक (बाइबल सम्बंधित) नींव।

लेखक की टिप्पणी:

परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना? परमेश्वर ने यहूदियों को बंधुआई में बाबुल जाने की अनुमति क्यों दी? परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्यों भेजा? परमेश्वर ने यहूदियों को क्यों अस्वीकार किया? परमेश्वर ने कलीसिया को क्यों चुना? परमेश्वर ने आपको क्यों चुना?

यूहन्ना ३:१६ का अध्ययन करें। इन प्रश्नों का उत्तर है कि परमेश्वर संसार से प्रेम करते हैं।

यह खंड सेवकाई के बाइबल के इतिहास को दर्शाता है और जब हम इस बात पर ध्यान केंद्रित करेंगे कि परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना, तब इससे पिछले प्रश्नों का उत्तर मिल जायेगा।

क. परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना?

१. परमेश्वर ने इस्राएल को चुना क्योंकि परमेश्वर प्रेम हैं (व्यवस्थाविवरण ७:६-८) पद ८ में हमें दो कारण मिलते हैं जिससे पता चलता है कि परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना।

क. एक कारण यह है कि वह इस्राएल से प्रेम करते थे।

ख. एक और कारण यह है कि उन्होंने अब्राहम की वाचा को पूरा किया जो उनके पूर्वजों के साथ बाँधी गई थी। यदि हम यह समझ जाते हैं कि उस वाचा में क्या शामिल है तो हम बेहतर ढंग से इस बात को भी समझ पाएँगे कि परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना।

२. परमेश्वर ने इस्राएल को चुना क्योंकि इसमें दूसरों लोग शामिल होंगे न की बाहर।

क. उत्पत्ति १२:१-३ का अध्ययन।

१) जिस वाचा का उल्लेख परमेश्वर ने व्यवस्थाविवरण ७:८ में किया है, जब उन्होंने इस्राएल को चुनने का अपना दूसरा कारण बताया, वह एक सेवकाई की वाचा है जिसमें सभी लोग शामिल हैं। यह उन्हें उससे बाहर नहीं करता है।

क) मत्ती २८:१९,२० की तुलना उत्पत्ति २८:१४,१५ से कीजिये (जहाँ परमेश्वर याकूब से वाचा को दोहराते हैं)।

ख) मत्ती २८:१९ की तुलना उत्पत्ति १२:१ से कीजिए।

टिप्पणियाँ -

२) अब्राहम की वाचा एक सेवकाई की वाचा है और इसका स्वयं महान आज्ञा के साथ एक मज़बूत सम्बन्ध है।

चर्चा विषय

नीचे दिए गए आरेख का उपयोग यह दिखाने के लिए करें कि कैसे मत्ती २८ की तुलना अब्राहम की वाचा से की गयी है।

महान आज्ञा	अब्राहम की वाचा
जाओ (मत्ती २८:१९)	पश्चिम, पूरब ,उत्तर, दक्षिण, चारों ओर फैलता जायेगा (उत्पत्ति २८:१४)
सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ (मत्ती २८:१९)	तेरे और तेरे वंश के द्वारा पृथ्वी के सारे कुल आशीष पाएँगे (उत्पत्ति २८:१४)
और देखो, मैं जगत के अन्त तक सदा तुम्हारे संग हूँ (मत्ती २८:२०)	और सुन, मैं तेरे संग रहूँगा... और तब तक तुझ को न छोड़ूंगा... (उत्पत्ति २८:१५)
जाओ (मत्ती २८:१९)	जा (उत्पत्ति १२:१)

३) वाचा का आधा भाग इस्राएल को आशीष (शामिल है) देता है, और वाचा का आधा भाग राष्ट्रों को आशीष (शामिल है) देता है।

चर्चा विषय

निम्नलिखित आरेख का उपयोग वाचा के २ हिस्सों को दर्शाने के लिए करें।

इस्राएल को आशीष देगा (शामिल है)	राष्ट्रों को आशीष देगा (शामिल है)
मैं तुझसे एक बड़ी जाति बनाऊँगा	तू आशीष का मूल होगा
मैं आशीष दूँगा	मैं दूसरों को आशीष और श्राप दूँगा
मैं तेरा नाम महान करूँगा	सारे कुल तेरे द्वारा आशीष पाएँगे

टिप्पणियाँ -

क) इस्राएल को आशीष दी गई ताकि वह दूसरों को आशीष दे सके। इस्राएल को परमेश्वर को जानने में सक्षम किया गया ताकि वह उसे ज्ञात करवा सके। इस्राएल को आशीषें और अधिकार दिए गए ताकि वह विशिष्ट जिम्मेदारियों को पूरा कर सके।

ख) परमेश्वर ने इस्राएल को चुना (आशीष) ताकि वह दूसरों को (आशीष) चुन सके।

ख. इस्राएल के चुने जाने का उद्देश्य (आशीष प्राप्त करना) पूरे पुराने नियम में स्पष्ट है। निम्नलिखित उदाहरणों का अध्ययन करें।

१) परमेश्वर ने इस्राएल को एक महान राष्ट्र बनाया। इसकी भूमि उपजाऊ और महत्वपूर्ण थी। इस्राएल एक मज़बूत और प्रभावशाली देश था। क्यों?

क) २ इतिहास ६:३२,३३ पढ़ें।

ख) जैसा कि पद ३३ कहता है, "जिस से पृथ्वी के सब देशों के लोग तेरा नाम जानकर, तेरी प्रजा इस्राएल के समान तेरा भय मानें।" दूसरों को शामिल करने के लिए परमेश्वर ने इस्राएल को चुना।

२) परमेश्वर ने इस्राएल को आशीष दी। उसने अपने लोगों को आशीष दी। क्यों?

क) उत्पत्ति ५०:२० का अध्ययन करें। परमेश्वर ने यूसुफ को आशीष क्यों दी? जैसा कि पद २० कहता है, "ताकि बहुत से लोगों के प्राण बचें।" दूसरों को शामिल करने के लिए परमेश्वर ने इस्राएल को चुना।

ख) १ राजा १०:१,४,५,८,९,१३ पढ़ें (ध्यान दें कि सुलैमान की महान आशीषों ने शीबा की रानी को कैसे प्रभावित किया, जो तब परमेश्वर के बारे में एक महान गवाही के साथ अपने देश लौट आई थी)।

ग) दानिय्येल ६:२५-२७ पढ़ें (ध्यान दें कि दानिय्येल पर परमेश्वर की आशीषों ने राजा दारा को कैसे प्रभावित किया, जिसने तब सभी लोगों, राष्ट्रों और हर भाषा के लोगों को परमेश्वर की महानता के बारे में लिखा था)।

(१) दानिय्येल की पुस्तक में, परमेश्वर के सेवकाई के उद्देश्य स्पष्ट हैं।

(२) वह अपने लोगों को आशीष इसलिए देते हैं ताकि राष्ट्र उसे जानने के द्वारा आशीषित हों।

टिप्पणियाँ -

घ) दानिय्येल के निम्नलिखित अनुच्छेदों में, विचार करें कि कैसे राजा दारा द्वारा की गई प्रतिक्रिया के समान एक प्रतिक्रिया उसके लोगों को आशीष देने में परमेश्वर के सेवकाई के उद्देश्यों को दर्शाती है (दानिय्येल ४:१-३; ४:३४-३७; ३:२८-३०; २:४६-४९ देखें)।

३) परमेश्वर ने इस्राएल के नाम को महान किया। क्यों? १ राजा ८:४१-४३ और १०:१ की समीक्षा करने के बाद इस प्रश्न के उत्तर पर विचार करें।

ग. भजन संहिता ६७:१-७ का अध्ययन।

१) परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना?

क) क्योंकि परमेश्वर संसार से प्रेम करते हैं (यूहन्ना ३:१६)।

ख) परमेश्वर का प्रेम नए नियम में शुरू नहीं हुआ। उन्होंने हमेशा संसार से प्रेम किया है (इब्रानियों १३:८)।

२) इस प्रकार, उन्होंने इस्राएल को शामिल (चुनने) करने के माध्यम से दूसरों को शामिल करना चुना।

क) उन्होंने ऐसा कैसे किया?

ख) वह इस्राएल को एक सेवकाई का राष्ट्र कहते हैं।

३. परमेश्वर ने इस्राएल को एक सेवकाई के राष्ट्र के रूप में चुना।

क. सबसे पहले, हमें **"पात्र धर्मशास्त्र"** की अवधारणा को समझना चाहिए।

१) **पात्र धर्मशास्त्र** बाइबल के इस तथ्य पर आधारित है किपरमेश्वर ने संसार तक पहुँचने के लिए चुने हुए लोगों के माध्यम से कार्य करना चुना।

क) पात्र धर्मशास्त्र की नींव गलातियों २:२० में पाई जाती है। यह बताती है कि मसीह हम में रहते और द्वारा कार्य करते हैं।

ख) वास्तव में, हम केवल इसलिए प्रेम कर सकते हैं क्योंकि उन्होंने पहले हमसे प्रेम किया (१ यूहन्ना ४:१९)। हम पवित्र हैं क्योंकि वह पवित्र है (लैव्यव्यवस्था १९:२)।

ग) हाँ, परमेश्वर के लोग उसके गवाह हैं (यशायाह ४३:१०)। वे उनके पात्र हैं। वह उनके द्वारा स्वयं को प्रगट करते हैं।

टिप्पणियाँ -

२) याद रखें, संसार के लिए परमेश्वर की सेवकाई मत्ती २८:१८-२० में आरम्भ नहीं हुई थी। यह उत्पत्ति ३:१४,१५ में आरम्भ हो चुकी थी (यीशु के क्रूस पर उनकी विजय के द्वारा छुटकारे की भविष्यवाणी के साथ)।

क) उत्पत्ति १-११ में, हम मनुष्य के पतन, जलप्रलय और बुराई की वृद्धि को देखते हैं। अंत में, हम बाबुल में राष्ट्रों को बिखरते हुए देखते हैं।

ख) फिर उत्पत्ति १२:१-३ में हम अब्राहम की वाचा को बनते हुए देखते हैं।

(१) क्या हुआ? क्या परमेश्वर निराश हो गये और उन्होंने अपनी छुटकारे की सार्वभौमिक योजना को त्याग दिया जिसका उल्लेख उत्पत्ति ३:१४,१५ में किया गया है? क्या वह संसार से नाराज़ हो गये और स्वयं को प्रसन्न करने के लिए किसी पसंदीदा को चुना?

(२) नहीं! उन्होंने बस अपनी योजना का उपयोग करना शुरू कर दिया जो कि पात्र धर्मशास्त्र पर आधारित है। उन्होंने एक सेवकाई के राष्ट्र को चुना।

ख. दूसरा, हमें परमेश्वर की इच्छाओं को समझना चाहिए कि वे इस्राएल के लिए उसके उद्देश्यों से कैसे सम्बंधित हैं।

१) परमेश्वर की बड़ी इच्छा है कि वह राष्ट्रों तक पहुँचे (भजन संहिता ११ और यशायाह ४५:२०-२३ देखें)।

२) परमेश्वर की बड़ी इच्छा है कि वह स्वयं को राष्ट्रों के सामने प्रगट करें (निर्गमन ९:१३-१६ और जकर्याह ८:२०-२३ देखें)।

३) राष्ट्रों को ज्योति प्रदान करना परमेश्वर की बड़ी इच्छा है।

क) यशायाह ४२:१-९ पर विचार करें (याद रखें कि प्रभु का दास इस्राएल के साथ-साथ यीशु मसीह का भी प्रतिनिधित्व कर सकता है)।

ख) निर्गमन १९:३-६ पर विचार करें (ध्यान दें कि इस्राएल याजकों का राज्य है; अर्थात्, ये वे लोग हैं जो राष्ट्रों के लिए परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करते हैं)।

४) राष्ट्रों का उद्धार करने की परमेश्वर की बड़ी इच्छा है (भजन संहिता ९८:१-३ और यशायाह ५२:७-१० देखें)।

ग. भजन संहिता ६७:१-७ की समीक्षा करें।

१) परमेश्वर ने इस्राएल को क्यों चुना?

२) क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं, उन्होंने इस्राएल को एक सेवकाई के राष्ट्र के रूप में चुना।

ख. परमेश्वर ने बेबीलोन की बंधुआई की अनुमति क्यों दी? (क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं)।

टिप्पणियाँ -

१. सबसे पहले, आइए हम पूछें, परमेश्वर ने इस्राएल को मिस्र में उनके पहले "बंधुआई के अनुभव" से क्यों बचाया?

क. स्वयं को राष्ट्रों के सामने प्रगट करने के लिए (निर्गमन ९:१३-१६ और यहोशू ४:२३,२४)।

ख. एक सेवकाई के राष्ट्र के रूप में इस्राएल का उपयोग जारी रखना।

२. इस्राएल ने एक सेवकाई के राष्ट्र के रूप में अपनी जिम्मेदारी को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने कोई अच्छी गवाही नहीं दी।

क. आमोस ५:२६,२७ का अध्ययन करें (ध्यान दें कि बंधुआई का उल्लेख "सेनाओं के परमेश्वर" से कैसे जुड़ा है, जिसका अनुवाद "अन्यजातियों के परमेश्वर" के रूप में किया जा सकता है)।

ख. यदि परमेश्वर द्वारा चुने हुए पात्र स्वेच्छा से सेवकाई की आज्ञा का पालन नहीं करते हैं, तो परमेश्वर उन्हें (जैसा उन्होंने योना के साथ किया था) अनजाने में इसका पालन करने के लिए "सहायता" करेंगे।

१) परमेश्वर के विषयमें इस्राएल की गवाही वास्तव में परमेश्वर की सेवकाई की योजना को रोक रही थी। वे आशीषनहीं बन रहे थे इसलिए उन्होंने आशीष देना भी बंद कर दिया।

२) जब वे राष्ट्रों के पास जाने के लिए तैयार नहीं थे, तब परमेश्वर उन्हें बंधुआई के माध्यम से "भेजने" में सक्षम थे, उन्हें एक सेवकाई के राष्ट्र के रूप में कार्य करने के लिए विवश किया।

क) यहूदी, जो परमेश्वर को जानते थे, संसार के स्थानों में निकाल दिए गए थे। स्वाभाविक रूप से, इसका बहुत प्रभाव पड़ा।

ख) उदाहरण के लिए, दानिय्येल के निकाले जाने में जीवन के मिसियोलॉजिकल परिणामों पर विचार करें।

(१) दानिय्येल की पुस्तक को सेवकाई की पुस्तक के रूप में पढ़ाया जा सकता है।

(२) कम से कम छह बार हम लोगों, राष्ट्रों और अन्यभाषा की प्रकाशितवाक्य ५:९ की अभिव्यक्ति देखते हैं (दानिय्येल ३:४; ३:७; ४:१; ५:१९; ६:२५; ७:१४)।

(३) कम से कम पाँच अलग-अलग समय में परमेश्वर अपने लोगों की आशीष का उपयोग मूर्तिपूजक राजा को राष्ट्रों को परमेश्वर की महिमा की घोषणा करने के लिए प्रेरित करने के लिए करते हैं।

टिप्पणियाँ -

ग. परमेश्वर ने अपने पुत्र को क्यों भेजा? (क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं)।

१. परमेश्वर ने अपने पुत्र को इसलिए भेजा क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं (यूहन्ना ३:१६)।

२. वह सभी मनुष्यों को अपने समीप लाना चाहते हैं (यूहन्ना १२:३२)।

३. उनकी इच्छा है कि सभी मनुष्यों का उद्धार हो (१ तीमुथियुस २:४) और किसी का नाश न हो (२ पतरस ३:९)।

घ. परमेश्वर ने यहूदियों को अस्वीकार क्यों कर दिया? (क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं)।

१. मत्ती २१:३३-४३ और माती ९:३७,३८ का साथ में अध्ययन करें।

क. यहूदियों ने मसीह और राष्ट्रों के प्रति उनके सेवकाई के दायित्व को अस्वीकार कर दिया। इसलिए, परमेश्वर ने उन्हें अस्वीकार कर दिया।

ख. मत्ती ९:३७,३८ में जब हम "मजदूर" और "फसल" शब्द पढ़ते हैं तो हम महान आज्ञा के विषय में सोचते हैं।

ग. यहूदियों की अस्वीकृति के सन्दर्भ में (मत्ती २१:४३), हम वही शब्द देखते हैं।

१) "दाख की खेती करने वाले" (मत्ती २१:३३,३४) मजदूर हैं।

२) हम "फसल" शब्द (पद ३४) और "उगाने" (पद ३४) और "अंगूर" (पद ४३) के विचार को भी देखते हैं।

२. परमेश्वर की योजना राष्ट्रों तक पहुँचने की है क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं। इस्राएल इस योजना से सहमत नहीं था, इसलिए उन्हें अस्वीकार कर दिया गया था।

ङ. परमेश्वर ने कलीसिया को क्यों चुना? (क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं)।

१. कलीसिया नया इस्राएल बन गई।

२. वे सेवकाई के नए राष्ट्र बन गए (१ पतरस २:९) जो परमेश्वर की सेवकाई की योजना को जारी रखेंगे (मत्ती २८:१८-२०)।

टिप्पणियाँ -

च. परमेश्वर ने आपको क्यों चुना? (क्योंकि वह संसार से प्रेम करते हैं)।

१. परमेश्वर ने आपको चुना क्योंकि वह आपसे और संसार से प्रेम करते हैं।

२. वह चाहते हैं कि आप उन्हें जानें और उन्हें ज्ञात करवाएँ।

३. वह आपको एक पात्र के रूप में बदलना चाहते हैं जिसे वह अपनी महिमा के लिए और अपने स्वयं की सेवकाई के उद्देश्यों के लिए उपयोग कर सकें।

IV. पाठ्यक्रम का निष्कर्ष।

क. यह सब शुरुआत में शुरू हुआ।

१. परमेश्वर ने संसार से आदिकाल से प्रेम किया। उनके पास आरम्भ से ही सभी लोगों के लिए छुटकारे की योजना रही है।

२. यीशु के अनुसार, मत्ती २८:१९-२० के शब्दों को कहने से बहुत पहले परमेश्वर ने तीन एजों की योजना बनाई थी (लूका २४:२७, ४५-४९ देखें)।

क. यीशु को मरना और मरे हुओं में से जी उठना अवश्य है (लूका २४:४६)।

ख. आत्मा का भेजा जाना अवश्य था (पद ४९)।

ग. उसके लोगों (गवाहों) को सभी राष्ट्रों में उद्धार का संदेश फैलाना अवश्य है (पद ४७,४८)।

३. इसलिए, यीशु मर गये, मरे हुओं में से जी उठे, और स्वर्ग पर चढ़ गये ताकि आत्मा को भेजा जाए (यूहन्ना १६:७ देखें)।

४. परमेश्वर के लोगों को राष्ट्रों के लिए गवाह बनने के लिए आत्मा को भेजा गया था (प्रेरितों के काम १:८ देखें)।

टिप्पणियाँ -

५. हम संसार में सुसमाचार प्रचार करना जारी रखते हैं ताकि यीशु वापस आयें (मत्ती २४:१४ देखें)।

क. क्या हमारी सेवकाई के प्रयास यीशु की वापसी को प्रभावित करते हैं? हाँ।

ख. २ पतरस ३:९-१२ का अध्ययन करें।

१) परमेश्वर धीरज हैं। एक विरोधाभासी अर्थ में हम कह सकते हैं कि वह प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह किसका इंतजार कर रहे हैं? क्या वह मत्ती २४:१४ को पूरा करने के लिए अपने चुने हुए पात्र (कलीसिया) की प्रतीक्षा कर रहे होंगे?

२) वास्तव में, पद ११ में पतरस हमारे "पवित्र आचरण और भक्ति" को संदर्भित करते हैं जो अन्य स्थानों में सुसमाचार प्रचार के साथ जुड़ा हुआ है (फिलिप्पियों २:१५,१६ के साथ फिलिप्पियों १:२७; १ पतरस २:१२; ३:१,२; १ थिस्सलुनीकियों १:६-८ देखें)।

३) पद १२ में पतरस कहते हैं कि हमें "परमेश्वर के आने के दिन की बाट जोहनी" चाहिए।

ख. जब महान आज्ञा पूरा हो जाएगी, तब अन्त आ जायेगा।

१. क्या आप यीशु को वापस आते हुए देखना चाहते हैं? क्या आप उनकी वापसी की बाट जोहना चाहते हैं?

क. फिर राष्ट्रों को सुसमाचार सुनाने का हिस्सा बनें। यीशु के नाम को उस जगह तक लाने में सहायता करें जहाँ अभी तक इसका प्रचार नहीं किया गया है (रोमियों १५:२०,२१)।

ख. आधुनिक सेवकाई में कई लोग इसे भूल गए हैं। अर्थात्, बहुत से लोग यह भूल गए हैं कि नए नियम की सेवकाई का केंद्र अगम्य स्थानों पर जाना था। हमें एक नए प्रकार के सेवकों की आवश्यकता है जो प्रेरित पौलुस के साथ यह कहने में सक्षम हों, "इसलिए मैं तुम्हारे पास आने से बार-बार रुका रहा" (रोमियों १५:२२)।

ग. हमें एक मिसियोलॉजी की आवश्यकता है जो संसार के उन लोगों तक पहुँचने पर ध्यान केंद्रित करे, जहाँ तक अभी पहुँचा नहीं गया है। पौलुस उन जगहों पर नहीं गये जहाँ पहले से ही कलिसियाएँ थी क्योंकि वह उन जगहों पर जाने में इतना व्यस्त थे जहाँ कलिसियाएँ नहीं थी।

२. याद रखें, यीशु ने आपको इसलिए बचाया ताकि आप दूसरों के लिए एक आशीष का कारण बन सकें (जकर्याह ८:१३)।

क. राष्ट्रों तक सुसमाचार पहुँचाने के लिए कुछ प्रभावी कार्य करें।

ख. जब आप स्वर्ग में जाएँगे तब आप कह पाएँगे कि प्रकाशितवाक्य ७:९ को पूरा करने में आपकी एक विशेष भूमिका थी। उस समय परमेश्वर, मत्ती २५:२१ के शब्दों को आपसे कह सकते हैं, "धन्य, अच्छे और विश्वासयोग्य दास।"

महान आज्ञा

टिप्पणियाँ -

लेखक की टिप्पणी:

अब शायद हम उन लोगों के लिए, जो सेवकाई करते हैं, एक नए शब्द का प्रयोग कर सकते हैं क्योंकि "सेवकाई" शब्द अब बहुत व्यापक और सामान्य शब्द बन चुका है।

आइए हम उन लोगों की पहचान करने के लिए, जो सुसमाचार को उन लोगों तक पहुँचा रहे हैं जिनके पास सुसमाचार नहीं पहुँचा है, "महान आज्ञा" शब्द का प्रयोग करें। "महान आज्ञा" एक ऐसी सेवकाई है जो उन लोगों तक सुसमाचार पहुँचाकर महान आज्ञा का पालन करना चाहती है, जिनके पास अभी तक कोई मौजूदा कलीसिया नहीं है। हमें अपनी प्रार्थनाओं, संसाधनों और महान आज्ञाओं की इस नई सेना की ओर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जिसे परमेश्वर इन अंतिम दिनों में खड़ा करेगा (कई लोगों का मानना है कि यह सेना "मूल सेवकों" से मिलकर बनी होगी)।

महान आज्ञा

टिप्पणियाँ -